श्री राजानक आनन्दनाथ विरचित

षट्त्रिंशितत्त्व संदोह
की
(हिन्दी - टीका)

प्रभा देवी

भूमिका

त्रिक–शास्त्र पर लिखी गई कई छोटी पुस्तकें अति उपयोगी तथा सार–गार्भित हैं। इन में वर्णित–विषयों को अति सरल रीति से समझाने का प्रयास किया गया है। इन्हीं पुस्तकों का आश्रय लेने से पाठकजन सहज रूप से तन्त्रालोक आदि वृहत् ग्रथों का अनुशीलन कर पाता है। इन में मुख्य कतिपय ग्रथों के नाम ये हैः– राजानक आनन्द नाथ विरचित षट्त्रिंशितत्तत्वसंदोह, चक्रपाणिनाथ विरचित – भावोपहार, श्री अभिनवगुप्त द्वारा रचित बोधपंचदशिका। आद्यनाथ विरचित – अनुत्तरप्रकाशपंचाशिका, तथा श्री क्षेमराज रचित पराप्रावेशिका।

हम ने छुट्टपन की अवस्था में गुरूवर्य श्री ईश्वर स्वरूप जी से 'षट्त्रिंशितत्तत्वसंदोह' नामक पुस्तिका को पढ़ा। इस के लेखक आनन्दनाथ हैं। इन्हों ने संस्कृत श्लोको में छतीस तत्वों का निर्णय संक्षिप्त किन्तु सार–गार्भित रूप में किया है। गुरूदेव ने हमें भगवती शारिका देवी जी तथा मुझे तन्त्रालोक ग्रन्थ पढ़ाने से पूर्व इन पुस्तिकों को कश्मीरी भाषा में

पढ़ाया। मैं ने तभी यानी ई० सन् १९४९ में ही इस का हिन्दी अनुवाद अपनी बाल–सुलभ बुद्धि को लेकर किया था। कृपालु गुरूदेव ने इस अनुवाद को देखा तथा इस में स्वयं कांट–छांट करके इसे संवारा। तब से यह पुस्तिका इसी परिवेष में मेरे साथ–साथ रही। इस वर्ष कई जिज्ञासुओं की प्रेरणा से प्रेरित होकर मैं इस पुस्तिका को उसी रूप में शैवी पाठकों के हितार्थ छपवा रही हूँ। इस में गुरू जनों की प्रेरणा भी अन्तर्निहित है, तभी यह मुद्रण के कलेवर में आ रही है।

जिन भक्तों ने इसे मुद्रित करने का बीड़ा उठाया है उन्हें साधुवाद देकर मेरी आत्मा हर्षित हो रही है। गुरूदेव इन्हें सत्–प्रेरणा से सदा उत्साहित करते रहें।

गुरूकृपावगाहिनी
प्रभा देवी
ई॰ संवत्'-२००७

यदयमनुत्तरमूर्ति -
निजेच्छयाखिलमिदं जगत्स्रष्टुं ।
पस्पन्दे स स्पन्दः
प्रथमः शिव ततत्त्वमुच्यते तज्ज्ञैः ।।१।।

जो यह अनुत्तर मूर्ति रूप शिव अपनी स्वातंत्र्य शक्ति से इस जगत को बनाने के लिए निर्विकल्पावस्था में रह कर ही स्पन्दित होते हैं, इसी प्रथम स्पन्द को ज्ञानीजन शिवतत्व कहते हैं।

इच्छा सैव स्वच्छा
सतत समवायिनी सती शक्तिः ।
सचराचरस्य जगतो
बीजं निखिलस्य निजनिलीनस्य ।।२।।

यही अनथक रूप से प्रवाहित निर्मल प्रभु की समवाय सम्बन्ध से युक्त इच्छा, शक्तितत्त्व कहलाती है। वही वास्तविक रूप से अपने ही स्वरूप में टिकी हुई सभी जड चेतनमय जगत को बनाने का मुख्य कारण मानी जाती है।

स्वेच्छाशक्त्युद्गीर्णं
जगदात्मतया समाच्छाद्य ।
निवसन्स एव निखिला -
नुग्रहनिरतः सदाशिवोऽभिहितः ।।३।।

अपनी इच्छा शक्ति में प्रकट बने हुए जगत् को आत्मरूपता से भली भांति स्वीकार करता हुआ वही सम्पूर्ण विश्व को अनुग्रह करने वाला सदाशिव तत्व कहलाता है।

विश्वं पश्चात्पश्यन्
इदन्तया निखिलमीश्वरो जातः ।
सा भवति शुद्धविद्या
येदन्ताहन्तयोरभेदमतिः ।।४।।

इसके बाद वही परमेश्वर सम्पूर्ण संसार को इदन्ता - यानी अपने से भिन्न देखता हुआ ईश्वर तत्व कहलाता है। वही प्रभु की इच्छा शक्ति, इदन्ता - यह और अहंता - मैं - अहं में अभेद बुद्धि से युक्त शुद्धविद्या तत्व कहलाती है।

माया विभेदबुद्धि –
निजांशजातेषु निखिलजीवेषु ।
नित्यं तस्य निरंकुश –
विभवं वेलेव वारिधे रुन्धे ।।५।।

अनुत्तर स्वरूपात्मक अंश से उत्पन्न सभी जीवों में भेद बुद्धि से युक्त माया शक्ति, उस परम शिव के निरर्गल स्वातन्त्रय रूपी ऐश्वर्य को संकुचित बनाने में ठीक उस 'वेला' बांध की भांति है जो विशाल समुद्र को रोकती है–उस को सीमित बना देती है।

स तया परिमितमूर्तिः
संकुचित समस्त शक्तिरेष पुमान्
रविरिव संध्यारक्ताः
संह्रतशक्तिः स्वभासनेऽप्यपटुः ।।६।।

वही शिव, उस माया शक्ति से सीमित बना हुआ जीव कहलाता है। इस दशा में आकर उसकी सभी सर्वज्ञता आदि शक्तियां सीमित हो जाती हैं। उसकी दशा ठीक उस अस्ताचल की ओर जाते हुए, संध्या की लालिमा से युक्त सूर्य की भांति होती है जो अपनी फैली हुई किरणों को समेट कर अपनी प्रभा से युक्त आकृति को दिखाने में भी असमर्थ होता है।

संपूर्णकर्तृताद्या
बह्वयः सन्त्यस्य शक्तयस्तस्य ।
संकोचात्संकुचिताः
कलादिरूपेण रूढयन्त्येवम् ।।७।।

उस परमशिव की सर्वकर्तृता, सर्वज्ञता आदि सभी बहुत सी शक्तियां हैं - उन्हीं शक्तियों को (जीव दशा में) वह संकुचित बनाकर कला, विद्या, राग, काल तथा नियति रूप में परिवर्तित करके स्थापित करते हैं।

तत्सर्वकर्तृता सा
संकुचिता कतिपयार्थमात्रपरा ।
किंचित्कर्तारममुं
कलयन्ती कीर्त्यते कला नाम ।।८।।

उस परमशिव की वही सर्वकर्तृता शक्ति जब संकोच को प्राप्त करती है तो इने गिने सीमित पदार्थों को ही जानने लगती है तथा इस जीव को सीमित कर्त्ता बनाती है। तब वही सर्वकर्तृता "कला" कहलाती है।

सर्वज्ञतास्य शक्तिः
परिमिततनुरल्पवेद्यमात्रपरा।
ज्ञानमुत्पादयन्ती
विद्येति निगद्यते बुधैराद्यैः ।।९।।

इस प्रभु की सर्वज्ञता शक्ति, जब (जीव दशा में आकर) परिमित बनती है तो कतिपय - कुछ ही पदार्थों को जानती हुई सीमित ज्ञान को ही जान पाती है। इसको पूर्व - अचार्यों ने 'विद्या' कहा है।

नित्यपरिपूर्णतृप्तिः
शक्तिस्तस्यैव परिमिता तु सती ।
भोगेषु रञ्जयन्ती
सततममुं रागतत्वतां याता ।।१०।।

उस परम शिव की सदा पूर्णता से युक्त तृप्तिः, नामक शक्ति, जब सीमित आकृति में परिणत होती है तो इस जीव को सांसारिक भोगों में पूर्ण रूप से आसक्त बना देती है। वही परिपूर्ण तृप्ति रूप वाली शक्ति, जीव दशा में आकर राग तत्व कहलाती है।

सा नित्यतास्य शक्ति -
निकृष्य निधनोदयप्रदानेन।
नियतपरिच्छेदकरी
कल्प्ता स्यात्काल तत्वरूपेण ।।११।।

इस प्रभु की वह 'नित्यता' नामक शक्ति जब अपनी नित्यता से तनिक नीचे खिसकी तो जन्म - मरण के चक्रमें आकर निश्चित आयु को देने वाले 'काल' तत्व से बखानी गई।

यास्य स्वतन्त्रताख्या
शक्तिः संकोचशालिनी सैव ।
कृत्याकृत्येष्ववशं
नियतममुं नियमयन्त्यभून्नियतिः ।।१२।।

इस परमशिव की स्वातन्त्र्य नामक शक्ति ही संकुचित बन कर इस जीव को जब योग्य तथा अयोग्य कार्यो के करने में हठात् नियत रूप से लगा देती है तो नियति शक्ति कहलाती है।

इच्छादित्रिसमष्टिः
शक्तिः शान्तास्य संकुचद्रूपा ।
संकलितेच्छाद्यात्मक
सत्त्वादिकसाम्यरूपिणी तु सती ।।१३।।

इच्छा, ज्ञान तथा क्रिया रूप तीन शक्तियां जब परस्पर एक बन कर सीमित शान्त अवस्था को प्राप्त हुईं तो वही इकट्ठे मिलकर इच्छा आदि शक्तियां सत्तोगुण, रजोगुण और तमोगुण की साम्यावस्था को प्राप्त हुईं।

बुद्ध्यादिसामरस्य
स्वरूपचित्तात्मिका मता प्रकृतिः ।
इच्छास्य रजोरूपा –
हंकृतिरासीदहं प्रतीतिकरी ।।१४।।

बुद्धि अहंकार तथा मन अन्तः करण रूप से जब तीनों एक ही स्वरूप में रहते हैं तो 'प्रकृति' कहलाती है। इसी परमशिव की इच्छा शक्ति जब रजोगुण रूप अहंकार को धारण करती है तो अहंकार तत्व कहलाती है।

ज्ञानापि सत्त्वरूपा
निर्णयबोधस्य कारणं बुद्धिः।
तस्य क्रिया तमोमय –
मूर्तिर्मन उच्यते विकल्पकरी ।।१५।।

सत्तोगुण से युक्त ज्ञान शक्ति, जब निर्णय देने वाले बोध का कारण बनती है तो बुद्धि कहलाती है। यही बोध, जब तमोगुण से युक्त बनता है तो क्रियाशील बनकर संकल्प विकल्पों को उछालने वाला मन कहलाया गया।

वामादिपंचभेदः

स एवसंकुचितविग्रहो देवः ।
ज्ञानक्रियोपराग –
प्राधान्याद्विविधविषयरूपोऽभूत ।।१६।।

(ईशान, तत्पुरूष, सद्योजात, वामदेव तथा अधोर नामक) पांच मुखों से युक्त आदिदेव परमशिव ही संकुचित रूप को धारण करने वाला जीव कहलाया गया तब वही शिव, संकुचित ज्ञान तथा क्रिया के रंग में रंग कर अनेकों विषयों को भोगने में लग गया।

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शन -
जिव्हा घ्राणानि बोधकरणानि ।
शब्द स्पर्शौ रूपं
रस गन्धौ चेति भूतसूक्ष्माणि ।।१७।।

कान, नेत्र, (स्पर्श) त्वचा, जबान तथा नाक तो ज्ञानेन्द्रियां कहलाई और शब्द, स्पर्श, रूप रस तथा गन्ध (ऊपर वर्णित इन्द्रियों का आहार बनकर सूक्ष्म महाभूत कहलाये गये।

अयमेवातिनिकृष्टो
जातो भूतात्मनापि भूतेशः ।
गगनमनिलश्च तेजः
सलिलं भूमिश्च पंचभूतानि ।।१८।।

यही पांच महाभूतों को बनाने वाला भूतेश परमशिव, निम्न कोटि को धारण करने पर स्थूल रूप बनकर आकाश वायु अग्नि जल तथा पृथिवी के रूप में पांच महाभूत भी बन गया।

श्रोत्रादिकरणवेद्याः
शब्दाद्यास्तानि वेदकान्येषाम्
वचनकरी वागासीत्
पाणिः स्यात्करणभूत आदाने ।।१९।।

कान आदि इन्द्रियों के, वेद्य-शब्द आदि पांच तन्मात्र हैं और कान आदि कर्मेन्द्रियां इन विषयों के, वेदक अनुभव करने वाले हैं। इसी भांति बोलने के लिए वाणी तथा पदार्थों को ग्रहण करने के लिए हाथ हैं।

गमन विर्गानन्द -
त्रितये पादादिकं करणम् ।
गन्धवती भूमिः स्यात्
आपः संसिद्धिक द्रवः तेजः ।।२०।।

चलने मूत्रादि के करने तथा आनन्द का उपभोग करने के लिए क्रमशः पैर, पायु और उपस्थ इन्द्रियां बनीं। पृथ्वी गन्धवती बनी और जल को ठोस किन्तु प्रवाहशील बनाया।

उष्णस्पर्शनरूप

स्पर्शो वायुरम्बरं सशब्दम्।

षट्त्रिंशतत्त्वमयं

वन्दे कौलं कुलातिगं शंभुम् ।।२१।।

अग्नि को गर्म स्पर्श से युक्त, वायु को रूपरहित स्पर्श वाला और आकाश में शब्द तत्व का संमिश्रण रखा। इस भांति छतीस तत्वों से युक्त तथा इनसे परे ठहरे हुए कौल (जगत्) रूप शिव की मैं वन्दना करता हूँ। उनका गुणानुवाद करता हूँ।

षट्त्रिंशितन्तत्व संदोह की
हिन्दी टीका समाप्त हुई।